संपादकीय

कृषि और लोकश्रुति

किंवदंतियों-जनश्रुतियों में सदियों का अनुभवजन्य ज्ञान समाहित रहता है, थोड़े में बहुत-कुछ कहने की क्षमता तीक्ष्णता व पैनेपन के साथ होती है। गाँव-देहात के लोगों की नियमावलियाँ, दैनंदिन के चिरस्थायी ज्ञान का घनीभूत रूप व्याप्त होता है, सागर में गागर भरने की युक्ति और 'नावक के तीर' की तरह 'देखन में छोटन लगै, घाव करै गंभीर' जैसी अभिव्यंजना-शक्ति होती है। हिन्दी और उसकी विभिन्न बोलियों की लोकोक्तियों में हिन्दी जाति की जातीय पहचान, उसकी अस्मिता का भान होता है। मौसम, जलवायु, ऋतुएँ, चर-अचर पदार्थों, जीव-जंतुओं, पक्षी-पक्षियों, भूत-प्रेतों, रोग-व्याधियों के लक्षण, उपचार, खान-पान, खेतीबाड़ी, फसलें, रहन-सहन, बात-व्यवहार, पहनावा, वर्ण व जाति व्यवस्था, लैंगिक संबंधों, रिश्ते-नातों, धर्म-संस्कृति, उम्र-वय, क्या करें और क्या न करें आदि की शिक्षा-ज्ञान आदि से संबंधित नीतियों, उपदेशों का गहरा ज्ञान समाया हुआ है। उदाहरणस्वरूप, उत्तर प्रदेश और बिहार में कहा जाता है कि जिसके पास ताकत है, उसी का बोलबाला होता है, अधिकार का इस्तेमाल भी वही कर पाता है -'जेकर लाठी ओकर भैंस।' दूसरे शब्दों में, 'जिसका जोर उसका ढोर।' आत्मनिर्भरता और स्वालंबन का संदेश 'अपना हाथ जगन्नाथ' में है। कृषि-कार्य के मामले में यह अक्षरशः सच साबित होता है। ब्रज में कहा जाता है कि 'जो हल जोते खेती वाकी, और नहीं तो जाकी लाकी' यानी जो हल चलाता है, खेती उसी की है। राजस्थान में यही मान्यता रही है कि खेती मालिक के परिश्रम पर बहुत कुछ निर्भर करती है -

खेती पाती वीणती, मौरां तणी खुजाळ।
जे सुख चावै जीव रौ, हाथौहाथ संभाळ।।

हरियाणा में कहा जाता है कि आलस-नींद किसान को, खाँसी चोर को, ब्याज की ऊँची दर मूलधन को तथा हँसी विधवा के लिए काल होती है -'आलस नींद किसान नै खावै, चोर नै खावै खाँसी। अका ब्याज मूल नै खावै, राँड नै खावै हास्सी।' इसी प्रकार व्यापार और काश्तकारी भी स्वयं की तत्परता पर चलती रही है, यह भाव हिमाचली लोकोक्ति में व्यक्त है -'पर हत्थें बणज, सनेहे खेती, कदी नी हुंदे तीयां रे तेती;' यानी जैसे पराए हाथों से व्यापार नहीं हो सकता, वैसे ही संदेश द्वारा दूसरों के माध्यम से काश्तकारी नहीं हो सकती। जमीन भी उतनी होनी चाहिए, जितनी पर ठीक ढंग से कृषि-कार्य किसान कर सके, उसकी देखरेख हो सके। इसी हेतु हदबंदी, भूदान और भूमि-वितरण का कार्य भी समय-समय पर किया जाता है। इसीलिए हिमाचल में कहा जाता है कि अधिक जमीन भूमिपति को और अधिक पत्नियाँ पति को खा जाती हैं -'बोहू जिमि हसला खांदी, बोहू जोई खसमा खाँदी।' पत्नी यदि खोटी है तो वह जीवन भर कष्ट देती है, आयु कम कर देती है -'साँझी खोटा फसल खोटी। औरत खोटी उम्र खोटी।' भारत कृषि प्रधान देश रहा है, जिसके लिए मौसम, बदलती ऋतुओं का ज्ञान बड़ा आवश्यक है। कहा जाता है कि काला बादल गरजकर डराता है, जबकि भूरा बादल बरसता है -'करिया बादर जी डरपावै, भूरौ बादर पानी लावै'; तो वहीं 'भोजपुरी में 'जे गरजेला उ बरसेला ना' कहा जाता है। हिमाचली लोकविश्वास के मुताबिक, पश्चिम से उठकर बाादल पूर्व दिशा में छा जाए तो शाम तक वर्षा हो सकती है -'पच्छमें उठ्ठी बदली, पूर्वे लई छाई, हण समझ संझा जो बरखा आई।' जेठ में पुरवैया हवा चलने लगे तो समझ लेना चाहिए कि सावन का महीना वर्षाहीन, सूखा-सूखा रहेगा -'जब जेठ चले पुरवाई, तब सावन धूलि उड़ाई।' सावन की वर्षा के बिना फसल खासकर धान का होना नामुमकिन है, इसलिए हरियाणवी में कहा जाता है कि वही ढोल अच्छा है जो बजे, वही बहू अच्छी होती है जो चुप रहे, सावन वही भला है जो बरसे और जेठ वही सुंदर लगता है, जिसमें धूप उगे -

ढोल भला जो बाजणां, बहु भली जो चुप,
सामणं भला जो बरसणां, जेठ भलेरी धूप।

भोजपुरी में भी कहा जाता है कि 'जेठ मास जो तपे निरासा, तब जानो बरखा के आसा।' बैसाख की बरसात गेहूँ-जौ के साथ आम के बौर के लिए हानिप्रद होती है -'बरखा बैसाख, न आम न कौआ।' चैत्र में मौसम की अनिश्चितता बनी रहती है, कभी साफ मौसम तो कभी घटा छा जाती है -'चैतरे री चतराऊड़ी, संगत कलारी, सौत ब्याली।' मीन राशि में मंगल ग्रह के जाने पर बहुत अधिक बारिश संभावना बनती है -'मंगल डेऊआ मीन, सात पाताड़ हुए सीन।' मार्गशीर्ष की बारिश सोने की अंकुर की तरह होती है -'मंगसरे री मंगसीर, सोने की टीर।' लेकिन यदि दो सावन लगे तो अकाल पड़ता है और घर-बार, ढोर बेचने की नौबत आती है -'दो साम्मण, दो भदवे, दो कात्तक दो माह, टांडे ढोर बेच कै नाज बिसावण जा।'

दिन में सियार बोलना अपशकुन का संकेत माना जाता है, अकाल पड़ने का पूर्वाभास देता है -'दिन में स्याळ जो सबद करै, निस्वै है काळ हळाहळ पड़ै।' निसर्ग और प्रकृति के कार्य-व्यापारों का जीव-जंतु अपने हाव-भाव से संकेत देते हैं, प्राकृतिक परिवर्तन से अवगत कराते हैं। भूकंप आने से पहले कुत्ते, बिल्लियों, पशु-पक्षियों का असामान्य व्यवहार व आहट शोध का विषय है। उत्तर प्रदेश और बिहार में चींटी का अंडा लेकर चलना बर्षा होने की संभावना दर्शाता है -

चींटी लै अंडा चलै, चिड़ी उड़ावै धूर।
व्यास कहै सुन भड्डरी, तौ बरसा नहीं दूर।।

ब्रज क्षेत्र में कहते हैं कि 'आसाढ़ मास जो घूमा कीन, ताकी खेती होवै हीन' यानी आषाढ़ में जो किसान खेती की चिंता न करके घूमता-फिरता है, उसकी खेती कमजोर होती है। धान की खेती के लिए वायु की अनुकूलता जरूरी है। राजस्थान में कहा जाता है -'सांवण मास सूरियौ बाजै, भादरवै परवाई। आसोजां संसदरियौं बाजै, काती साख सवाई।।' इसी संबंध में भड्डरी की बहुत सारी उक्तियाँ भी लोक में रच-बस गई हैं, जैसे -

आद्रा तो बरसै नहीं, मृगशिर पौन न जोय।
तौ जानौ यों भड्डरी, बरसा बूँद न होय।

हिमाचल में कहा जाता है कि फसल बुद्धवार को बोना चाहिए और शुक्रवार को काटना चाहिए -'बुद्ध बाहणी, सुक्कर बहडणी।' हरियाणा में चना, गेहूँ, बाजरे आदि की खेती होती है, उसके बोने और काटने का समय कहावतों से स्पष्ट है -

चणा पाक्कै चैत म्हे, अर गेहूँ बैसाख विचार।
कात्तक पाक्कै बाजरा, अर मंगसर पाक्कै जुआर।।

साठी साठ दिन बाद होता है, लेकिन उसे बोने के ठीक आठवें दिन पानी पटाना चाहिए -'साठी होवे साठवें दिन, पानी पावे आठवें दिन।' हिमाचली कहावत के अनुसार, बुढ़ापे की संतान और माघ मास में बोयी फसल दोनों ही कमजोर होती है -'बुड्ढ़ी दी जाया, ते माघे दा बाया।' पाँच साल में आम फलने लगता है, जबकि महुआ को फलने-फलने में पच्चीस साल और इमली को फलने में तीस बरस लग जाते हैं -'पाँचे आम, पच्चीसे महुआ, तीस बरिस पर इमली के फहुआ।' बेशक अब मशीनी युग है, किंतु खेती के लिए बैल ही हल जोतने का एकमात्र साधन रहा है, जिसे लेकर कहावतें प्रचलित हैं -

सींग मुड़े, माथा उठा, मुँह का होवै गोल,
रोम नरम चंचल करन, तेज बैल अनमोल।

लोक कहावतों के अतिरिक्त पहेलियों में भी पुराने जमाने के कृषि-कार्य को समझाने का नुस्खा बताया गया है। जैसे सिंचाई के लिए पहले ढेंकी या ढेंकुली का इस्तेमाल होता था, जिसके लिए बुझौवल काबिलेगौर है -

आकास गदले चिरई, पाताल गहल बच्चा।
हुचुबक मारे चिरई, पियाव मोर बच्चा।।

पहेलियों में अनाज और फसलों का जीव-जंतुओं से साम्य है। भोजपुरी में एक पहेली है कि 'ए चिरइया ऊँट, ओकर पोर बाजे पुट। ओकर खालरा ओदारू, ओकर मांस मजेदार।' यानी ऊँट की तरह ऊँचा पेड़, जिसका छिलका उखाड़ कर चीभने पर मीठा लगता है, वह ईंख है। इसी ईंख के लिए दूसरी पहेली है कि 'ऐने पानी ओने पानी, बीच में केकइया। लबर-झबर फर फरे, खाय में मिठाइया।' केला के लिए पहेली है -'एड़ी के दाम दूम, चाकर पतिया। फरे के लदफद, फरि गइल मिठइया।' इसी प्रकार एक बहुत प्रसिद्ध पहेली है -

हरी थी मन भरी थी, लाख माती मोती जड़ी थी।
राजा जी के बाग में, दुशाला ओढ़े खड़ी थी।।

सैकड़ों दानों वाला मक्के की बाल इस बुझौवल का उत्तर है। इसी प्रकार मूली के लिए 'उजरी बिलइया के हरिअर पोंछि' कहा जाता है; चना-मटर के लिए 'लड़कइयाँ में चोथा-चोथी, जवानी में फूल बिराजे, आ बुढ़ापा में झुन झुन बाजे' प्रसिद्ध है, तो अरहर के लिए निम्न पहेली भोजपुरी में प्रचलित है -

गोल गोल गुटिया, सुपारी अइसन रंग।
ग्यारह देवर लेवे अइलन, जेइ के गइली संग।।

किंवदंतियों और पहेलियों में जिज्ञासा जागृत करने, लोकनीतियों से परिचित कराने और लोककार्य में प्रवृत्त करने की अद्‌भुत क्षमता विद्यमान है। लोकज्ञान की ये सदियों से उच्चरित उक्तियाँ स्वयं भी सदैव व्यावहारिक हलचल करती प्रतीत होती हैं।